



NEERAJ®

M.H.D.-4

**नाटक और अन्य
गद्य विधाएँ**

Chapter Wise Reference Book
Including Many Solved Sample Papers

Based on

I.G.N.O.U.

& Various Central, State & Other Open Universities

By: Sanjay Jain, M.A. Hindi, B.Ed.



**NEERAJ
PUBLICATIONS**

(Publishers of Educational Books)

Mob.: 8510009872, 8510009878 E-mail: info@neerajbooks.com

Website: www.neerajbooks.com

MRP ₹ 450/-

Content

नाटक और अन्य गद्य विधाएँ

Question Paper—June-2024 (Solved)	1-2
Question Paper—December-2023 (Solved)	1-3
Question Paper—June-2023 (Solved)	1-3
Question Paper—December-2022 (Solved)	1-2
Question Paper—Exam Held in March-2022 (Solved)	1-2
Question Paper—Exam Held in August-2021 (Solved)	1-2
Question Paper—Exam Held in February-2021 (Solved)	1-2
Question Paper—December, 2019 (Solved)	1-3
Question Paper—June, 2019 (Solved)	1-4
Question Paper—December, 2018 (Solved)	1-4
Question Paper—June, 2018 (Solved)	1-2
Question Paper—December, 2017 (Solved)	1-2
Question Paper—June, 2017 (Solved)	1-2

<i>S.No.</i>	<i>Chapterwise Reference Book</i>	<i>Page</i>
--------------	-----------------------------------	-------------

हिंदी नाटक और रंगमंच-I

1. भारतेंदु की नाट्य दृष्टि और 'अंधेर नगरी'	1
2. सामाजिक यथार्थ के परिप्रेक्ष्य में 'अंधेर नगरी'	9
3. 'अंधेर नगरी' का नाट्यशिल्प	20
4. जयशंकर प्रसाद की नाट्य दृष्टि और 'स्कन्दगुप्त'	32
5. 'स्कंदगुप्त' में इतिहास दृष्टि और राष्ट्रीय चेतना	41
6. 'स्कंदगुप्त' की रंगमंचीय संभावनाएँ	49

हिंदी नाटक और रंगमंच-II

7. मोहन राकेश की नाट्य सृष्टि	70
8. सामाजिक यथार्थ के परिप्रेक्ष्य में 'आधे-अधूरे'	77

S.No.	Chapterwise Reference Book	Page
9.	'आधे-अधूरे' का नाट्य शिल्प	87
10.	अंधायुग : मिथकीय आख्यान का पुनःसृजन	105
11.	'अंधायुग' में चरित्र सृष्टि	115
12.	'अंधायुग' का नाट्य शिल्प	125
एकांकी और नुक्कड़ नाटक		
13.	एकांकी नाटक : तांबे के कीड़े	143
14.	नुक्कड़ नाटक : औरत	153
गद्य साहित्य की अन्य विधाएँ-I		
15.	निबंध : धोखा	161
16.	निबंध : लोभ और प्रीति	170
17.	निबंध : कुटज	181
18.	निबंध : संस्कृति और जातीयता	192
19.	निबंध : तीसरे दर्जे का श्रद्धेय	202
गद्य साहित्य की अन्य विधाएँ-II		
20.	रेखाचित्र : ठकुरी बाबा	211
21.	संस्मरण : वसंत का अग्रदूत	223
22.	जीवनी : कलम का सिपाही	235
23.	आत्मकथा : क्या भूलूँ क्या याद करूँ	245
गद्य साहित्य की अन्य विधाएँ-III		
24.	यात्रा-वृत्तांत : किन्नर देश की ओर	255
25.	रिपोर्ताज : अदम्य जीवन	263
26.	साक्षात्कार : ऑक्टेवियो पॉज	275

**Sample Preview
of the
Solved
Sample Question
Papers**

Published by:



**NEERAJ
PUBLICATIONS**

www.neerajbooks.com

QUESTION PAPER

June – 2024

(Solved)

नाटक और अन्य गद्य विधाएँ

M.H.D.-4

समय : 3 घण्टे |

| अधिकतम अंक : 100

नोट : प्रथम प्रश्न अनिवार्य है। शेष में से किन्हीं चार प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

प्रश्न 1. निम्नलिखित में से किन्हीं तीन की संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए—

(क) युद्ध क्या गान नहीं है? रुद्र का श्रृंगीनाद, भैरवी का तांडव नृत्य और शस्त्रों का वाद्य मिलकर एक भैरव-संगीत की सृष्टि होती है। जीवन के अंतिम दृश्य को जानते हुए, अपनी आँखों से देखना, जीवन रहस्य के चरम सौंदर्य की नग्न और भयानक वास्तविकता का अनुभव—केवल सच्चे वीर-हृदय को होता है, ध्वंसमयी महामाया प्रकृति का वह निरंतर संगीत है। उसे सुनने के लिए हृदय में साहस और बल एकत्र करो। अत्याचार के श्मशान में ही मंगल का—शिव का, सत्य-सुंदर संगीत का समारंभ होता है।

उत्तर—संदर्भ—देखें अध्याय-6, पृष्ठ-60, व्याख्या-9

(ख) हर एक के पास एक-न-एक वजह होती है। इसने इसलिए कहा था। उसने इसलिए कहा था। मैं जानना चाहता हूँ कि मेरी क्या यही हैसियत है इस घर में कि जो जब जिस वजह से जो भी कह दे मैं चुपचाप सुन लिया करूँ? हर वक्त की धतकार, हर वक्त की कोंच, बस यही कमाई है, यहाँ मेरी इतने सालों की?

उत्तर—संदर्भ—देखें अध्याय-9, पृष्ठ-97, व्याख्या-5

(ग) संस्कृति थी यह एक बूढ़े और अंधे की

जिसकी संतानों ने महायुद्ध घोषित किए,

जिसके अंधेपन में मर्यादा

गलित अंग वेश्या-सी

प्रजाजनों को भी रोगी बनाती फिरी

उस अंधी संस्कृति,

उस रोगी मर्यादा की

रक्षा हम करते रहे

सत्रह दिन।

उत्तर—संदर्भ—कल्पित पात्र प्रहरी-युग के माध्यम से धर्मवीर भारती ने अपने गीति नाट्य 'अंधा युग' की इन पंक्तियों में वर्तमान व्यवस्था में दासवृत्ति-प्रस्त जनता की मनोवृत्ति की निरर्थकता का संकेत दिया है।

व्याख्या—वस्तुतः यहां ऐसी कोई भी वस्तु नहीं थी, जिसकी रक्षा की जाती। केवल एक वृद्ध और अन्धे (धृतराष्ट्र) की संस्कृति ही थी, जिसकी हम रक्षा करते थे। उस अन्धे धृतराष्ट्र की संतानों ने महायुद्ध घोषित किया। उसके अन्धेपन में मर्यादा की लकीर पीटी जा रही थी। मर्यादा गले हुए अंगों वाली (क्षीणकाय अथवा गले-सड़े अंगों वाली) वेश्या के समान प्रजाजनों को भी रोगी बना रही थी अर्थात् जिस प्रकार कोई गलित यौवना करती वेश्या अपने सम्पर्क से युवकों को भी रुग्ण बना देती है, स्वयं तो रुग्ण होती ही है, उसी प्रकार धृतराष्ट्र के राज्य में मर्यादा स्वस्थ रूप में दृष्टिगोचर नहीं हो रही थी, केवल नाम की मर्यादा थी, जो भीरुता का ही द्योतक थी। हम सत्रह दिन तक केवल अन्धे की तथाकथित उस संस्कृति और रुग्ण मर्यादा की रक्षा करते रहे। भाव यह है कि हम केवल ढोंग के दिखावे मात्र के रक्षक थे, इससे हम ऊब चुके हैं।

वह अब निरर्थक सिद्ध हुई। कारण, हर व्यक्ति जीवन में रहकर जब कुछ करता है; जीवन जीता है तो अपनी कुछ आस्थाओं की सुरक्षा के लिए करता है। इन्हीं में उसको अपने अस्तित्व की सार्थकता भी नजर आती है, किन्तु वर्तमान व्यवस्था में इन दोनों के अभाव में हमें अपना साहस और श्रम निरर्थक नजर आता है; साहस और श्रम करने को जी ही नहीं चाहता, क्योंकि हमें इनका कुछ अर्थ ही नजर नहीं आता।

सचमुच इस व्यवस्था में हमारे साहस और श्रम का कुछ भी अर्थ नहीं था। जीवन के अर्थहीन सूने गलियारे में हम (निरर्थक) पहरा देते-देते थक चुके हैं।

विशेष—(i) तत्सम प्रधान शब्दावली है।

(ii) भाषा प्रतीकात्मक किंतु सहज, सरल एवं स्पष्ट है।

(iii) शासकों की मनमानी और युद्ध की विभीषिका पर प्रकाश डाला गया है।

(घ) प्रेमी तो प्रेम कर चुका, उसका कोई प्रभाव प्रिय पर पड़े या न पड़े। उसके प्रेम में कोई कसर नहीं। प्रिय यदि उससे प्रेम करके उसकी आत्मा को तुष्ट नहीं करता तो उसमें उसका क्या दोष? तुष्टि का विधान न होने से प्रेम के स्वरूप की पूर्णता में कोई त्रुटि नहीं आ सकती।

उत्तर—संदर्भ—देखें अध्याय-16, पृष्ठ-180, व्याख्या-5

(ड) श्रद्धेय के भी दर्जे होते हैं। तीसरे दर्जे का श्रद्धेय प्रेरणा नहीं देता। वह शर्म देता है। गांधीजी की बात अलग थी। वे तीसरे को भी पहले दर्जे की महिमा दे देते थे। हम तो पहले दर्जे में बैठकर भी तीसरे की हीनता अनुभव करते हैं। संत और बुद्धिजीवी में यही फर्क है।

उत्तर-संदर्भ-देखें-अध्याय-19, पृष्ठ-208, व्याख्या-1

प्रश्न 2. आधुनिक हिंदी नाट्य परम्परा में 'अंधेर नगरी' का स्थान निर्धारित कीजिए।

उत्तर-संदर्भ-देखें-अध्याय-3, पृष्ठ-28, प्रश्न 3

प्रश्न 3. 'स्कंदगुप्त' नाटक का रंगमंचीय संभावनाओं की दृष्टि से मूल्यांकन कीजिए।

उत्तर-संदर्भ-देखें-अध्याय-6, पृष्ठ-50, 'स्कंदगुप्त में दृश्य योजना और रंगमंचीयता'

प्रश्न 4. 'अंधायुग' की पैराणिकता में निहित समकालीनता का विवेचन कीजिए।

उत्तर-संदर्भ-देखें-अध्याय-10, पृष्ठ-109, प्रश्न 1

प्रश्न 5. 'आधे-अधूरे' के कथ्य और नाट्य शिल्प में निहित प्रयोगशीलता का मूल्यांकन कीजिए।

उत्तर-संदर्भ-देखें-अध्याय-9 पृष्ठ-90, प्रश्न 1 तथा पृष्ठ-91, प्रश्न 2

प्रश्न 6. 'कुटज' निबंध के आधार पर हजारीप्रसाद द्विवेदी के ललित निबंधों की विशेषताएँ बताइए।

उत्तर-संदर्भ-देखें-अध्याय-17, पृष्ठ-184, प्रश्न 1
प्रश्न 7. असंगत नाटक को परिभाषित करते हुए 'ताँबे के कीड़े' का विश्लेषण कीजिए।

उत्तर-संदर्भ-देखें-अध्याय-13, पृष्ठ-147, प्रश्न 1
प्रश्न 8. जीवनी साहित्य की दृष्टि से 'कलम का सिपाही' का मूल्यांकन कीजिए।

उत्तर-संदर्भ-देखें-अध्याय-22, पृष्ठ-239, प्रश्न 1
प्रश्न 9. मोहन राकेश के नाट्य संबंधी विचारों पर प्रकाश डालिए।

उत्तर-संदर्भ-देखें-अध्याय-7, पृष्ठ-73, प्रश्न 1
प्रश्न 10. निम्नलिखित में से किन्हीं दो पर टिप्पणियाँ लिखिए-

(क) नुक्कड़ नाटक 'औरत'

उत्तर-संदर्भ-देखें-अध्याय-14, पृष्ठ-156, प्रश्न 1

(ख) 'अंधायुग' के प्रमुख चरित्र

उत्तर-संदर्भ-देखें-अध्याय-11, पृष्ठ-118, प्रश्न 1

(ग) 'वसंत के अग्रदूत' में निराला

उत्तर-संदर्भ-देखें-अध्याय-21, पृष्ठ-230, प्रश्न 2

(घ) 'अदम्य जीवन' का मूल संवेदना

उत्तर-संदर्भ-देखें-अध्याय-25, पृष्ठ-265, 'अदम्य जीवन : मूल संवेदना'

Sample Preview of The Chapter

Published by:



**NEERAJ
PUBLICATIONS**

www.neerajbooks.com

नाटक एवं अन्य गद्य विधाएँ

हिंदी नाटक और रंगमंच - I

भारतेंदु की नाट्य दृष्टि और 'अंधेर नगरी'



परिचय

भारत में नाट्य लेखन की परंपरा बहुत पुरानी एवं समृद्ध रही है। यह परंपरा संस्कृत नाटकों तथा लोक नाटकों से जुड़ी है। हिंदी साहित्य पर दृष्टिपात करें, तो आधुनिक काल के पूर्वार्द्ध में हिंदी साहित्य में नाटकों की परंपरा न के बराबर ही कही जा सकती है। हिंदी साहित्य के आधुनिक युग की शुरुआत भी भारतेंदु से होती है और नाटकों की परंपरा का सूत्रपात भी भारतेंदु हरिश्चंद्र ने किया था। आधुनिक युग से पहले हिंदी में जो नाटक मिलते हैं, वे अधिकांश अनुदित थे। पारसी थियेटर की इस समय तक शुरुआत हो चुकी थी और इसका प्रभाव भी हिंदी नाटकों पर दिखता है। नाटक के विकास हेतु भारतेंदु ने नाटक लिखे, अनुवाद किए, नाट्य मंडलियाँ बनाई, नाटकों का प्रदर्शन भी किया। भारतेंदु ने समय की माँग को देखते हुए नाटकों के नियमों में लचीलापन लाने का प्रयास किया। पारसी थियेटर और पश्चिमी रंगमंच से भी हिंदी नाटक प्रभावित हुआ। विभिन्न नाट्य परंपराओं के कारण नाटक रंगमंचीय नाटक तथा साहित्यिक नाटक में बँट गए। भारतेंदु का प्रयास नाटकों द्वारा राष्ट्रीय चेतना जगाना तथा सामाजिक समस्याओं को उजागर करना था। भारतेंदु ने अनेक नाटकों की रचना की, जिनमें 'अंधेर नगरी' एक महत्वपूर्ण व्यंग्यपरक नाटक है। 'अंधेर नगरी' मुख्यतः प्रहसन है। इसमें उन्होंने एक राजा का अपने राज्य में अव्यवस्था के द्वारा अंग्रेजी शासन के अत्याचारों, शोषण एवं मनमाने व्यवहार पर व्यंग्य करते हुए भारतवासियों को जगाने और विदेशी शासन से मुक्ति के लिए संघर्ष का संदेश दिया है।

अध्याय का विहंगावलोकन

भारतेंदु और विभिन्न नाट्य परंपराएँ

यदि प्राचीन काल पर दृष्टि डालें, तो भारत में नाटक की परंपरा अत्यंत समृद्ध एवं दीर्घ रही है। साथ ही अनेक लोक एवं

शास्त्रीय परंपराएँ भी रही हैं। भरतमुनि 'नाट्यशास्त्र' के प्रणेता माने जाते हैं। उन्होंने नाटक को 'पंचम वेद' कहा है। नाट्य-रचना को नियमबद्ध करने का श्रेय भरतमुनि को जाता है। उन्होंने नाट्यशास्त्र की नियमबद्धता में भारत की प्रचलित लोक परंपराओं की पृष्ठभूमि को अपनाया। उन्होंने नाटक की रचना को सहयोगी कला रूप, रंगमंच, प्रस्तुति, प्रेक्षागृह का स्वरूप, भेद, आकार आदि सभी को नियमों में बाँधा। भारत में मूलतः संस्कृत में लोक नाटक रचे गए। संस्कृत नाटकों ने तत्कालीन कला दृष्टि तथा रंगमंच को स्पष्ट किया तथा लोक नाटकों ने लोक परंपराओं, स्थानीय विशेषताओं आदि को प्रस्तुत किया। अमानत रचित 'इन्द्रसभा' नाटक भी तत्कालीन इतिहास, नाटक और रंगमंच की देन था। इस नाटक के संगीत, नृत्य, भाव, रस, गतियों आदि द्वारा नाटक के शिल्प को मौलिक पहचान दी गई, परंतु फिर भी नाटकों की परंपरा भारतीय समाज और जीवन से समाप्त होती चली गई। इसका कारण था मध्यकालीन सामंती पतनोन्मुखता, लेकिन लोक नाट्य की परंपरा पहले की तरह ही चलती रही। अंग्रेजी शासन की स्थापना के बाद पश्चिमी नाटक और रंगमंच भारतीय जनजीवन और कला का अंग बन गए। इससे अपनी नाट्य परंपरा की खोज की प्रेरणा मिली, लेकिन पारसी थियेटर के व्यावसायिक और सतही मनोरंजक नाटकों के कारण साहित्यिक और रचनात्मक नाट्य रचना को बल मिला और रंगमंच से अलगाव पैदा होता चला गया। इसी परंपरा के कारण समीक्षकों ने नाटकों को साहित्यिक और रंगमंचीय में विभाजित करना शुरू कर दिया। रंगमंच से कटाव के कारण कल्पना से युक्त व्यावसायिक रंगमंचीय नाटकों की प्रक्रिया में साहित्यिक नाटक लिखे जाने लगे।

इन्हीं परिस्थितियों में भारतेंदु हरिश्चंद्र एक युगप्रणेता के रूप में उभरे। उन्होंने नाटक की माध्यमगत और कलागत विशेषताओं को समझकर योजनाबद्ध ढंग से काम किया और साथ में अन्य लोगों का सहयोग भी लिया। उन्होंने प्रयास किया कि नाटक

2 / NEERAJ : नाटक एवं अन्य गद्य विधाएँ

लोकरुचि को बढ़ाने वाले, राष्ट्रीय चेतना जगाने वाले एवं प्रदर्शन की दृष्टि से उचित हों। उन्होंने नाट्य परंपरा के साथ नाट्य शिल्प और रंगमंच के विकास हेतु भी बहुत प्रयास किए।

भारतेंदु ने अपने नाट्य लेखन द्वारा हिंदी नाटक को नया रूप दिया, जिसका श्रेय उनकी मौलिकता एवं चिंतनशीलता को जाता है। उन्होंने न तो भरतमुनि की नाट्य परंपरा को नकारा और न ही तत्कालीन युग की आवश्यकताओं की अनदेखी की। अतः भारतेंदु ने नाटक को भारतीय और आधुनिक दृष्टि से प्रतिष्ठित किया। वे लोकधर्मी चेतना के नाटककार हैं, लेकिन संस्कृत नाटकों, पारसी और पश्चिमी नाट्य परंपरा के प्रभाव को भी नकारा नहीं जा सकता।

भारतेंदु की नाट्य संबंधी दृष्टि

भारतेंदु की अपनी संपूर्ण साहित्य रचना लोकचेतना, सामाजिक परिवर्तन एवं राष्ट्रीय जागरण से आबद्ध है और नाट्य लेखन भी इससे अछूता नहीं है। उनका उद्देश्य था कि लोग समय की जरूरत को समझें ताकि नाटकों द्वारा सामाजिक परिवर्तन एवं राष्ट्रीय चेतना जगाई जा सके। साथ ही वे हिंदी साहित्य को भी आधुनिक, श्रेष्ठ और समृद्ध बनाना चाहते थे। इसके लिए उन्होंने आंदोलनकारी प्रयास किए। भारतेंदु के नाटक लेखन में जो प्रगतिशीलता और क्रांतिकारी स्वर दिखता है, उसने प्रेमचंद को बहुत प्रभावित किया। भारतेंदु ने नाटक लिखने के साथ-साथ अभिनेता, समीक्षक, रंगकर्मी और निर्देशन की भूमिका भी निभाई। उन्होंने नाटक में दृश्यता एवं काव्यात्मकता का ध्यान रखा। उन्होंने 'जानकीमंगल', 'नीलदेवी', 'सत्य हरिश्चंद्र' जैसे नाटकों में अपने अभिनय की छाप छोड़ी। उन्होंने रंगमंच के विकास हेतु कवितावर्धिनी सभा, रीडिंग क्लब, काशी नेशनल थियेटर आदि के निर्माण के साथ ही अनेक नाट्य मंडलियाँ स्थापित कीं। यह कार्य उनके मंडल के लेखकों ने किया। नाट्य रचना को कलात्मक एवं लोक अभिरुचि युक्त बनाने के लिए नाटक रचने के साथ-साथ नाटक संबंधी लेख लिखकर नाटक संबंधी विचारों को सुस्पष्ट भी किया। 1883 में ये विचार 'नाटक' नामक पुस्तक के रूप में प्रकाशित किए गए। उन्होंने नाटक के विभिन्न पक्षों का उद्घाटन करने के लिए 'नाट्यशास्त्र', 'साहित्य दर्पण', 'काव्य प्रकाश' आदि प्राचीन संस्कृत ग्रंथों को आधार बनाया। इस पुस्तक के लेखन का उद्देश्य नए नाटककारों की सहायता करना था। आधुनिक नाटकों की विशेषताओं, सही नाट्य पद्धति आदि पर भी पुस्तक में विचार प्रस्तुत किए गए।

आधुनिक हिंदी नाटकों की परंपरा को उन्होंने पश्चिमी और बंगला नाटकों के प्रभाव से जोड़ा। प्राचीन संस्कृत नाट्य परंपरा की उपयोगिता को न तो वे अस्वीकार कर पाए और न पूर्णतः अनुकरण कर पाए, क्योंकि वे प्राचीन के साथ आधुनिक को अपनाने के पक्ष में थे, परंतु उन्होंने आधुनिक युग की जरूरतों के अनुसार प्राचीन नाट्य परंपरा को अपनाने पर बल दिया और यथार्थ को प्राचीन और नवीन का विभाजक बिंदु माना। उनका मानना था,

बीते हुए को वर्तमान समाज स्वीकार नहीं करता, अतः यथार्थ ही लौकिक दृष्टि का समावेश कर सकता है। क्योंकि लोग दृश्यकाव्य में स्वाभाविक रचना को ही पसंद करते हैं, अतः नाटक में प्राचीन नाट्य परंपराओं का उतना महत्त्व नहीं रहा। भारतेंदु ने हिंदी नाट्य लेखन के लिए संस्कृत नाटक की लीक पर चलने की बजाय नवीन दृष्टिकोणों को अपनाया। वे प्राचीन को नवीन के आधार के रूप में स्वीकारते थे।

नवीन नाट्य लेखन में उन्होंने शृंगार, हास्य, कौतुक, समाज, संस्कार तथा देशवत्सलता जैसे पाँच उद्देश्य माने। इन उद्देश्यों ने नाट्य परंपरा को प्राचीन से नवीन की ओर मुड़ने का संकेत माना। समाज संस्कार और देशवत्सलता के उद्देश्यों को सामाजिक सरोकारों और राष्ट्रीय चेतना के प्रसार के लिए नाट्य लेखन में शामिल किया, जिससे सामाजिक कुरीतियों को दूर किया जा सके और देश को अंग्रेजी शासन से मुक्ति दिलाई जा सके। यह कार्य लोगों में जागृति पैदा करके ही किया जा सकता है। उन्होंने अपने नाटकों 'भारत जननी', 'नील देवी' तथा 'भारत दुर्दशा' की रचना देशवत्सलता के उद्देश्य से की। ये नाटक बताते हैं कि भारतेंदु ने देश के प्रति प्रेम का भाव अमूर्त रूप में ग्रहण नहीं किया था। वे चाहते थे कि लोग तत्कालीन परिस्थितियों को जानें तथा अपने देश और समाज की स्वतंत्रता और उन्नति में सहयोग दे सकें।

भारतेंदु ने हास्य-व्यंग्य और मनोरंजन युक्त नाटकों की रचना को उपयुक्त बताया, क्योंकि हास्य-व्यंग्य के साथ मनोरंजन द्वारा लोग खेल-खेल में समस्या को प्रस्तुत कर देते हैं और प्रभाव भी छोड़ते हैं। जनता से जुड़ने के लिए उन्होंने नाटकों में स्थानीय बोलियों के प्रयोग, मुहावरे, लय-ताल, लोक संस्कृति, आचार, गीत आदि को शामिल किया। 'प्रेम जोगिनी' और 'अंधेर नगरी' में इसे भली-भाँति देखा जा सकता है। भारतेंदु के नाटकों में उद्देश्य, आवश्यकता, शिल्प, रंगमंचीयता थोपे हुए न लगकर स्वाभाविकता से उसका अंग बन जाते हैं।

भारतेंदु द्वारा रचित विभिन्न नाटक

भारतेंदु ने अपनी नाटक रचना द्वारा हिंदी नाट्य कला और रंगमंच के विकास का ऐतिहासिक कार्य करने के साथ राष्ट्रीयता और सामाजिकता को जगाने का कार्य किया। उनकी नाट्य रचना उनके बहुमुखी व्यक्तित्व, सृजनशीलता तथा गंभीरता का परिचायक है। उन्होंने मौलिक नाटकों के साथ अनूदित नाटक भी लिखा तथा छायानुवाद भी किया। 'वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति' (1873), 'विषस्य विषमौषधम्' (1875), 'प्रेम जोगिनी' (1875), 'सत्य हरिश्चंद्र' (1875), 'चंद्रावली' (1876) 'भारत दुर्दशा' (1876), 'भारत जननी' (1877), 'नीलदेवी' (1880), 'अंधेर नगरी' (1881) तथा 'सती प्रताप' (1884) उनके मौलिक नाटक हैं। 'रत्नावली' (1888), 'पाखंड विडंबन' (1872), 'धनंजय विजय' (1873), 'मुद्राराक्षस' (1875), 'कपूरमंजरी' (1876) तथा 'दुर्लभ बंधु' (1880) उनकी अनूदित रचनाएँ हैं। 'विद्यासुंदर' (1888) छायानुवाद है तथा मूलतः बंगला में रचित है।

भारतेंदु ने कथानक, चरित्र, भाषा, शिल्प एवं रंगमंच की दृष्टि से नाटकों का अध्ययन करके उनका विकास किया और रूढ़ियों एवं अंधविश्वासों को तोड़कर नाटक की विषयवस्तु को यथार्थवाद से जोड़ा, क्योंकि उनका उद्देश्य नाटकों के जातीय स्वरूप को विकसित करना था। नाटक में उद्देश्य की पूर्णता के लिए हास्य-व्यंग्य को भी वे जरूरी मानते थे। आइए, भारतेंदु की नाट्य रचनाओं का संक्षिप्त परिचय प्राप्त करें।

'वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति' एक प्रहसन है, जो अपनी विषयवस्तु और व्यंग्य द्वारा जनता को जीवन में आई विकृतियों के बारे में सजग करता है। इसके सभी पात्र प्रतीकात्मक हैं।

संस्कृत भाषा शैली में रचित 'विषय विषमौषधम्' एकपात्रीय नाटक है। यह तत्कालीन सामंती राज, देश की परतंत्रता तथा अंग्रेजों की कूटनीति के बारे में बताता है। हास्य-व्यंग्य, चुटकुले, मुहावरे आदि इसे मनोरंजक बनाते हैं।

'प्रेमजोगिनी' नाटक में काशी का वर्णन किया है तथा यह सामंती संस्कृति के पतन को दिखाता है। इस नाटक के हर अंक में नए पात्र का आना नाटक के क्षेत्र में भारतेंदु का नया प्रयोग है।

'सत्य हरिश्चंद्र' क्षेमेश्वर के 'चण्डकौशिक' नाटक के आधार पर रचित है, परंतु भारतेंदु ने इसे अपनी शैली में प्रस्तुत किया है। इस नाटक का उद्देश्य नवयुवकों को आदर्शवादी और चरित्रवान बनाना है। वे चाहते थे कि देश का जनमानस गर्व से भर जाए। इस नाटक पर पाश्चात्य शैली का प्रभाव है, परंतु फिर भी इसमें मौलिकता विद्यमान है।

'चंद्रावली' स्त्री पात्र प्रधान नाटिका है। इसमें सूर, मीरा, रसखान आदि कवियों की भक्ति का आनंद मिलता है। यह रासलीला पर आधारित लोकनाट्य है। चंद्रावली के द्वारा भारतेंदु ने राधा-कृष्ण के प्रति अनन्य प्रेम और भक्ति का परिचय दिया है।

'भारत दुर्दशा' में अंग्रेजी राज की अप्रत्यक्ष आलोचना के साथ भारतेंदु की देशभक्ति, निर्भीकता तथा सहृदयता का परिचय मिलता है। इस नाटक के पात्र प्रतीकात्मक हैं तथा लोकधर्मी चेतना और प्रयोगशीलता के कारण यह आज भी प्रासंगिक है। इसका शिल्प भी लचीला है तथा इसमें पारसी रंगमंच और लोकनाट्य का मिश्रण भी है।

'भारत जननी' नाटक भारत की तत्कालीन परिस्थितियों का सफल चित्रण करता है।

'नीलदेवी' नाटक स्त्री प्रधान है तथा पहला दुखांत नाटक है। इस नाटक के द्वारा भारतेंदु ने बताया है कि भारतीय स्त्रियों की दशा बहुत खराब है। आधुनिक नाटक की दृष्टि से यह 'नाट्यसंगीत' और 'नाट्यगीत' का सुंदर उदाहरण है।

'अंधेरी नगरी' नाटक भारतेंदु का एक महत्वपूर्ण नाटक है। यह हास्ययुक्त चुटीली रचना है। इसमें एक लोककथा के माध्यम से राजनीतिक अराजकता को उजागर करने तथा लोकजीवन और राजनीतिक चेतना को करीब लाने का प्रयास किया गया है। कथा के यथार्थ को व्यंग्य द्वारा व्यक्त करना भारतेंदु की मौलिकता है।

'सती प्रताप' नाटक में पुरुषों में नारी के प्रति चेतना लाने हेतु सती सावित्री के कथानक को आधार बनाया गया है।

'पाखंड विडंबन' कृष्ण मिश्र के नाटक 'प्रबोध चंद्रोदय' के तीसरे अंक का अनुवाद है। एक अंक की कथा को नई कथा के रूप में प्रस्तुत करना भारतेंदु की मौलिकता है।

'धनंजय विजय' वीर रस प्रधान ओजपूर्ण नाटक है। इसमें नए साहित्य और कविता में कजरी, टुमरी की रूढ़ि को छोड़कर नई रीति का परिचय मिलता है।

'मुद्राराक्षस' मूलतः संस्कृत में लिखा गया है और विशाखदत्त द्वारा रचित है। इसमें चाणक्य की कूटनीति तथा नैतिकता के दर्शन होते हैं। इसका उद्देश्य राजनीतिक चेतना जगाना है। इसमें नायक-नायिका की शृंगार लीला से हटकर प्राचीन और नवीन परंपरा का समन्वय वास्तव में अनूठा है।

'कपूरमंजरी' राजशेखर के प्राकृत भाषा में रचित नाटक का अनुवाद है। यह तत्कालीन राजदरबार का व्यंग्यात्मक चित्र प्रस्तुत करता है। इसमें मूल गीतों के स्थान पर हिंदी के रीतिकालीन कवियों के शृंगारिक गीतों का प्रयोग है, जो नया अनुभव है।

'दुर्लभ बंधु' शेक्सपीयर के नाटक 'मर्चेन्ट ऑफ वेनिस' का अनुवाद है। इसमें पात्रों का भारतीयकरण किया गया है। यह नाटक सच्ची मित्रता एवं धनिकों के हृदय की क्रूरता को दिखाता है।

'अंधेर नगरी' की रचना

'अंधेर नगरी' नाटक एक प्राचीन लोककथा पर आधारित है, जिसे भारतेंदु ने संक्षिप्त कलेवर में तत्कालीन परिस्थितियों पर व्यंग्य करने हेतु गंभीर, सांकेतिक एवं मनोरंजक शैली में प्रस्तुत किया है। इसी कारण 'अंधेर नगरी' एक कालजयी रचना बन गई है। हालांकि इसके कथा स्रोतों पर आलोचकों ने अनेक विचार दिए हैं। 'अंधेर नगरी' प्रहसन की प्रासंगिकता पर रामदीन सिंह ने इसे दक्षिण में पारसी तथा मराठी नाटक वालों द्वारा रंगमंच पर खेले जाने का उल्लेख किया है।

एक विचार यह भी है कि यह नाटक 1881 में बिहार प्रांत के किसी जमींदार को लक्षित करके लिखा गया था तथा नेशनल थियेटर में अभिनीत किया गया था। भारतेंदु ने एक ही रात में 'अंधेर नगरी चौपट राजा, टके सेर भाजी टके सेर खाजा' कहावत को चुटीला रूप देकर यह नाटक तैयार किया था। इससे भारतेंदु की नाट्यकर्म की तीव्रता और गंभीरता भी लोगों के सामने आई तथा सार्वजनिक, रंगमंच और विश्वजनीन संदर्भों की अंतरंगता के बारे में भी सकारात्मक सोच बनी।

'अंधेर नगरी' काफी समय तक नाटक नहीं अपितु प्रहसन के रूप में जाना जाता रहा, परंतु 1960 में रंगमंच के प्रति सोच में बदलाव से यह हिंदी का सार्वभौमिक व्यंग्यात्मक, विलक्षण संदर्भ रचना तथा समाज की विसंगति को दिखाने वाला महाकाव्यात्मक नाटक बन गया। इस नाटक में कबीर का अक्खड़पन, तो निराला का विद्रोह, मुक्तिबोध का अनगढ़पन, तो नागार्जुन की व्यंग्यात्मकता

4 / NEERAJ : नाटक एवं अन्य गद्य विधाएँ

सब कुछ झलकती है। इस रचना में भारतेन्दु की नाट्य रचना के प्रति सोच, कथा-विन्यास, संयोजन संरचना, जीवंतता तथा भाषा पर पकड़ के दर्शन होते हैं। 'अंधेर नगरी' संक्षिप्त कथा प्रसंगों एवं नाटकीय स्थिति तथा दृश्य रचना में तत्कालीन ही नहीं, समकालीन संदर्भ में भी एक गंभीर एवं तीखे व्यंग्य वाली रचना है। युग दृष्टि और व्यंग्यात्मकता भारतेन्दु के लेखन की विशेषता है, जो 'अंधेर नगरी' में पूरी तरह साकार हुई है। इसी विशेषता ने 'अंधेर नगरी' को प्रहसन मात्र नहीं बनने दिया। तत्कालीन शासन के दमनकारी चरित्र की सांकेतिक अभिव्यक्ति में यह एक पूर्णतः सफल रचना है। यह नाटक आम जनता की शक्ति को भी दिखाता है। भारतेन्दु केवल समाज-सुधार ही नहीं अपितु भारतीय समाज को रूढ़ियों और अंधविश्वासों से मुक्त करके उनके सोए विश्वास और आत्मा को जगाना चाहते थे और इस दिशा में 'अंधेर नगरी' उनका एक सफल प्रयास है। इससे जनमानस की उदासीनता और जड़ता को तोड़ने तथा स्वतंत्रता की मानसिकता तैयार करने में भी सहायता मिली है। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि 'अंधेर नगरी' वर्तमान सामाजिक अवरोधों को ध्वंस करने के साथ-साथ राजनीतिक-सांस्कृतिक चेतना को भी जगाती है तथा लोगों के मन में यह विश्वास भरती है कि शासक चाहे कितना भी अत्याचारी क्यों न हो, जनता की शक्ति के आगे कुछ भी नहीं है। इस नाटक से भारतेन्दु का परिवर्तन के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण, सर्जनात्मक नाट्य रचना और सामाजिक गंभीरता स्पष्ट होती है। यह रचना जनचेतना को अभिव्यक्त करने के साथ-साथ संघर्ष की प्रेरणा देती है। यह यथार्थ को उसके मूल रूप में व्यंग्यात्मकता के जरिये रखता है। यह नाट्य रचना नाट्य विधा की सामाजिकता और सामूहिकता का प्रमाण है।

स्वपरख अभ्यास-प्रश्न

प्रश्न 1. भारतेन्दु की नाटक संबंधी सोच की प्रमुख विशेषताएँ क्या हैं? यह सोच 'अंधेर नगरी' की रचना में व्यक्त हुआ या नहीं? स्पष्ट कीजिए।

उत्तर—हिन्दी साहित्य में अठारहवीं शताब्दी तक कविता की ही विविध राग-रागिनियां गूंजती रहीं। नाटक के रन्ध्रों में न तो कोई स्वर फूंकने वाला दिखाई देता है और न उसे सुनने के लिए कोई प्रतीत होता है। यदि कहीं से कोई स्वर फूँका भी गया, तो उसके अनाड़ीपन ने औरों का उत्साह भंग कर दिया। हिन्दी को संस्कृत नाटकों की हासोन्मुख परम्परा ही प्राप्त हुई थी और ऐसे नाटक मिले थे जिनमें कथानक की शिथिलता, वर्णनात्मक कविताओं और प्रगीत-मुक्तकों की बहुलता थी। इसी का अनुकरण हिन्दी नाटककारों ने किया, जिसके फलस्वरूप अत्यन्त हीन कोटि के नाटक लिखे गए, जैसे बनारसीदास का 'समयसार नाटक', प्राणचन्द चौहान का 'रामायण महानाटक' और लच्छीराम का 'करुणाभरण नाटक'। इस प्रकार भारतेन्दु से पूर्व हिन्दी का नाट्य-साहित्य दरिद्र ही था। मौलिक नाटकों में विश्वनाथ सिंह का

'आनन्द रघुनन्दन' और भारतेन्दु के पिता श्री गिरधरदास का 'नहुष' प्रसिद्ध थे। अनुवादों में जसवन्तसिंह का 'चन्द्रोदय' और लक्ष्मणसिंह का 'शकुन्तला' नाटक प्रमुख थे। शेष नाटक तो नाटकीय कविता के रूप में आख्यान मात्र थे। अतः भारतेन्दु के सामने नाटक का कोई आदर्श नहीं था। उन्होंने स्वयं इस बीहड़ वन में अपना मार्ग प्रशस्त किया और यह कार्य उन्होंने और उनके साथियों ने मौलिक, रूपान्तरित और अनूदित नाटकों द्वारा किया।

अंग्रेजी शासन की स्थापना ने पश्चिम के नाटकों और रंगमंच से हमारा परिचय कराया। इस परिचय ने हमें प्रेरित किया कि हम अपनी नाट्य परंपरा की पुनः खोज करें। वर्षों तक पारसी नाटक कम्पनियों के व्यावसायिक और सतही मनोरंजक नाट्य प्रदर्शनों का बोलबाला रहा। इसका नतीजा यह हुआ कि रचनात्मक और साहित्यिक स्तर के नाटक लिखने की कोशिशें रंगमंच से दूर हटती चली गईं।

भारतेन्दु का उदय हिन्दी साहित्य के लिए एक असाधारण घटना थी। उनके सजग व्यक्तित्व ने जागरण के सभी तत्त्वों को आत्मसात् कर लिया और पहली बार पारसी थियेटर की शुद्ध व्यावसायिक दृष्टि से मुक्त होकर देश की आशा-आकांक्षाओं को नाटक के माध्यम से प्रस्तुत किया।

भारतेन्दु युग-विधायक कलाकार थे, क्योंकि वह हिन्दी-साहित्य और देश के इतिहास में एक युग-मोड़ पर संक्रान्ति-काल में उत्पन्न हुए। वह एक चेतन साहित्यकार थे। इतिहास अपना पुराना दौर समाप्त करके नये मोड़ पर आगे बढ़ रहा था। उसमें नई परिस्थितियों के कारण नई धाराएं आकार मिल रही थीं। ऐसे नाजुक समय में भारतेन्दु ने प्राचीन परम्परा के साथ युग की नई धाराओं का सामंजस्य बिठाया, उसके टोस धरातल पर युग-निर्माण की चेतना प्रदान की। उन्होंने प्राचीन तथा नवीन का सामंजस्य स्थापित करके नये जीवन, नये साहित्य और नई संस्कृति के निर्माण की नींव डाली और नाटक को उसका सशक्त माध्यम बताया।

भारतेन्दु युग का आरम्भ मध्ययुगीन जड़ता से मुक्त हो नहीं पाया था। अभी भी जनता धार्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टि से नाना रूढ़ियों, मिथ्या अन्धविश्वासों, पाखण्डों, धर्माडम्बरों और विकारों से ग्रस्त थी। प्राचीन विकृतियां, जड़ संस्कार और सामाजिक कुरीतियां जनता के मन-प्राण को जकड़े हुए थीं।

भारतेन्दु का पुनरुत्थान के प्रति विशेष आग्रह था। नव-जागरण की प्रक्रिया का अपने साहित्य विशेषतः नाटकों की प्रक्रिया बनाना चाहते थे। उन्होंने लिखा है, "सचमुच नाटक के प्रचार से इस भूमि का बहुत-कुछ भला हो सकता है।...दिल्ली से इन लोगों को जैसी शिक्षा दी जा सकती है, वैसी और तरह से नहीं।" वह नाटक की असीम प्रभाविष्ण शक्ति से भली-भांति परिचित थे। अतः उन्होंने नाटकों के मंचन द्वारा मनोरंजन के साथ-साथ परिवर्तन, सुधार तथा जागरण लाने का बीड़ा उठाया। भारतेन्दु से पूर्व न तो हिन्दी में अच्छे